संपादकीय जागरण

शनिवार, 29 सितंबर, 2018 : आश्विन कृष्ण 4 वि. 2075

व्यवहार में आए बिना बड़े से बड़ा विचार भी व्यर्थ है

समानता की ओर

सुप्रीम कोर्ट ने केरल के विख्यात सबरीमाला मंदिर में हर उम्र की महिलाओं के प्रवेश की अनुमति देकर स्त्री-पुरुष समानता की अवधारणा को पुष्ट करने के साथ ही पूजा-अर्चना के मामले में लैंगिक भेदभाव को भी खत्म करने का काम किया है। कायदे से तो इस मसले को अदालतों तक जाना ही नहीं चाहिए था। संबंधित धर्माचार्यों को स्वतः इस निष्कर्ष पर पहुंचना चाहिए था कि सभी को समान निगाह से देखने वाला ईश्वर का कोई भी रूप स्त्री-पुरुष में भेद कैसे कर सकता है? आखिर जब स्त्री को देवी के तौर पर माना जाता है तब फिर उसे ही ईश्वर के घर यानी मंदिर में प्रवेश करने से कैसे रोका जा सकता है? निःसंदेह इस पर भी विचार किया जाना चाहिए था कि आज के इस युग में इस सोच को सही कैसे कहा जा सकता है कि मासिक धर्म के दौरान महिलाएं मंदिर में प्रवेश के योग्य नहीं रह जातीं। यह दकियानूसी सोच तो एक तरह से स्त्री शक्ति और मातृ शक्ति का अनादर है। यह सही है कि सबरीमाला मंदिर में 10 से 50 वर्ष की आयु वर्ग की महिलाओं को प्रवेश न देने के पीछे एक मान्यता यह भी थी कि भगवान अयप्पा ब्रह्मचारी स्वरूप में हैं, लेकिन आखिर ऐसी कोई मान्यता महिलाओं को उनके मंदिर से दूर रखने का कारण कैसे बन सकती है? प्रश्न यह भी है कि भगवान अयप्पा उन महिला भक्तों की भावनाओं की अनदेखी कैसे कर सकते हैं जो उनके दर्शन की अभिलाषा रखती हों? एक जाग्रत समाज वही होता है जो देश, काल और परिस्थितियों के हिसाब से स्वयं को और साथ ही अपना परंपराओं को बदलता रहे। जिस समाज में ऐसा नहीं होता वह जड़ता का शिकार होता है।

चूंकि पांच सदस्यीय पीठ की एक सदस्य जस्टिस इंदु मल्होत्रा ने सबरीमाला मंदिर में महिलाओं को प्रवेश की अनुमति देने के चार अन्य जजों के फैसले से असहमति जताई, लेकिन मात्र इसके आधार पर यह उचित नहीं होगा कि इस निर्णय को चुनौती देने पर विचार किया जाए। बेहतर यह होगा कि जो लोग सुप्रीम कोर्ट के इस फैसले से सहमत नहीं वे उसे चुनौती देने के बजाय स्वीकार करने पर विचार करें। यह अपेक्षा इसलिए, क्योंकि सुप्रीम कोर्ट का फैसला स्वयं में सुधार करने की हिंदू धर्म की परंपरा के अनुरूप है। ध्यान रहे कि हिंदू समाज अपनी इस विशेषता के कारण ही विशिष्ट है कि वह समय के साथ अपनी धार्मिक, सामाजिक और सांस्कृतिक मान्यताओं एवं परंपराओं में परिवर्तन करने की सामर्थ्य रखता है। इस सामर्थ्य का प्रदर्शन करते रहने की आवश्यकता है, क्योंकि तभी उन मान्यताओं और परंपराओं से मुक्ति मिल सकती है जो भेदभाव या फिर असमानता को इंगित करती हैं। अगर इस फैसले का दूरगामी असर होता है तो इसमें चिंता की कोई बात नहीं। इसका कोई औचित्य नहीं कि धर्म और संस्कृति के नाम पर किसी भी तरह के भेदभाव को संरक्षण मिले। चूंकि मानव समाज की गरिमा के प्रतिकूल धार्मिक-सांस्कृतिक परंपराओं को किसी आधार पर जारी नहीं रखा जा सकता इसलिए सुप्रीम कोर्ट को यह जानने की चेष्टा भी नहीं करनी चाहिए कि कोई परंपरा धर्म विशेष का अनिवार्य अंग है या नहीं?

गैर जिम्मेदार अधिकारी

यह हतप्रभ कर देने वाली घटना है कि पर्यटन विभाग के अधिकारियों को पर्यटन के फायदों की समझ नहीं है। विश्व पर्यटन दिवस पर आयोजित एक समारोह में विभाग के अपर मुख्य सचिव अवनीश अवस्थी के पूछने पर अधिकारी पर्यटन के फायदे नहीं बता पाए। इसके विपरीत समारोह में मौजूद श्रोताओं ने अनेक लाभ गिना दिए। इससे अधिक दुर्भाग्यपूर्ण क्या हो सकता है कि अधिकारियों को पर्यटन के बारे में आम आदमी जितनी भी समझ नहीं है। ऐसे अधिकारियों से प्रदेश में पर्यटन को उद्योग के रूप में बढ़ावा देने की उम्मीद कैसे की जा सकती है? उत्तर प्रदेश के सभी अंचल पर्यटन की दृष्टि से समृद्ध हैं, इसके बावजूद आगरा का ताजमहल और काशी की गंगा ही पर्यटकों को आकृष्ट कर पाते हैं। दुर्भाग्य ही है कि पर्यटन विभाग ने पर्यटन स्थलों को आकर्षक, दर्शनीय और उनका पैकेज बनाने का प्रयास नहीं किया। आगरा और वाराणसी के अलावा लखनऊ, प्रयाग, विंध्य क्षेत्र, नैमिषारण्य और बुंदेलखंड में भी धार्मिक एवं प्राकृतिक पर्यटन की अपार संभावनाएं हैं, यद्यपि अब तक इन क्षेत्रों को पर्यटन सुविधाओं की दृष्टि से विकसित नहीं किया गया।

> दुर्भाग्य ही है कि पर्यटन विभाग ने पर्यटन स्थलों को आकर्षक, दर्शनीय और उनका पैकेज बनाने का प्रयास नहीं किया

पर्यटन ऐसा सेक्टर है जिसके जरिये राज्य सरकार न सिर्फ अपनी आय में उल्लेखनीय वृद्धि कर सकती है बल्कि स्थानीय लोगों को व्यापक पैमाने पर रोजगार भी मिल सकता है। बहरहाल, इसे लेकर कभी गंभीरतापूर्वक रणनीति नहीं बनाई गई। राज्य सरकार को पर्यटन विभाग में ऐसे अधिकारी तैनात करने चाहिए जिनकी पर्यटन और विकास में रुचि हो। दरअसल, सुविधाजनक सर्किट विकसित करके ही पर्यटकों को आगरा और काशी व अन्य पर्यटन क्षेत्रों की ओर आकृष्ट किया जा सकता है।

कह के रहेंगे

माधव जोशी

जागरण जनमत

कल का परिणाम

क्या सुप्रीम कोर्ट के फैसले के बाद आधार से जुड़ी सारी उलझनें दूर हो गई हैं?

आज का सवाल
क्या सुप्रीम कोर्ट के रुख के बाद अयोध्या विवाद पर जल्द ही निर्णायक फैसले की उम्मीद जगी है?

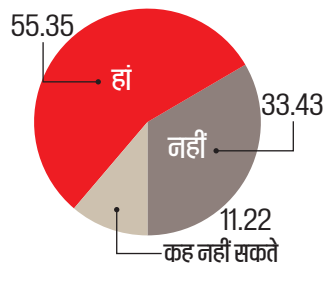

अपनी राय और अधिक लोगों तक पहुंचाने के लिए अपने मोबाइल के मैसेज बॉक्स में जाकर POLL लिखें, स्पेस देकर Y, N या C लिखकर 57272 पर भेजें
Y -हां, N-नहीं, C-कह नहीं सकते

परिणाम जागरण इंटरनेट संस्करण के पाठकों का मत है।
सभी आंकड़े प्रतिशत में।

संकट में सरकारी स्कूलों का अस्तित्व

जगमोहन सिंह राजपूत

एक ऐसे दौर को जिसे ज्ञान की शक्ति का युग कहा जा रहा है तब भारत में सरकारी स्कूल बंद कराने का अप्रत्याशित चलन आरंभ हो रहा है

देश के कई राज्यों के ग्रामीण क्षेत्रों के दौरे में एक बात पता चली कि लोगों में सरकारी स्कूलों के बंद होने की शंका बढ़ रही है। वे सवाल कर रहे हैं कि क्या सरकार अपने सभी स्कूल बंद करने जा रही है? यह प्रश्न उठना अस्वाभाविक भी नहीं है, क्योंकि तमाम स्कूलों का एक-दूसरे में विलय किया जा रहा है। इस पर दलील यह है कि ये स्कूल व्यावहारिक नहीं रह गए हैं और यहां संसाधन झोंकना समझदारी नहीं है। एक ऐसे दौर को जिसे ज्ञान की शक्ति का युग कहा जा रहा है तब भारत में सरकारी स्कूल बंद कराने का अप्रत्याशित चलन आरंभ हो रहा है। सरकार दूरदराज के इलाकों को स्कूलों से दूर कर रही है। आखिर इस पर क्यों नहीं ध्यान दिया गया कि साल दर साल सरकारी स्कूलों में बच्चों की संख्या क्यों घटती गई और आज हजारों की तादाद में स्कूलों को बंद करने या उनके विलय की मजबूरी क्यों सामने आई है? जो स्थिति बनी है उसे समग्र रूप से समझने के लिए एक बेहद प्रभावकारी नवाचार को याद करना जरूरी है। राजस्थान के तिलोनिया में 1984-86 में सोशल वर्क एंड रिसर्च सेंटर नामक संस्था ने तीन प्रायोगिक स्कूल चलाए। इसमें उपलब्ध स्थानीय शिक्षित व्यक्तियों को अध्यापन के लिए नियुक्त किया गया। उन्हें शिक्षा कर्मी नाम दिया गया और लगातार सेवाकालीन प्रशिक्षण दिया गया। पाठ्यक्रम और शिक्षण विधा को स्थानीयता से जोड़ा गया। चूंकि पाठ्यक्रम में स्थानीय समस्याओं की जानकारी तथा समाधान भी शामिल थे, लिहाजा सभी लोगों और परिवारों ने इस 'स्कूल' में रुचि ली और यथासंभव सहयोग दिया। परिवर्तन के लिए स्थानीयता का ज्ञान और समझ आवश्यक माना गया। स्थानीय व्यक्ति ही समाज से पूरी समझ के साथ जुड़ सकता है। कालांतर में आंगन पाठशालाएं सफलतापूर्वक चलाई गईं और स्कूल छोड़ चुके बच्चों के लिए सुविधानुकूल समय पर 'प्रहर पाठशालाएं' भी संचालित हुईं। यह पूरी कवायद इसलिए की गई, क्योंकि उस क्षेत्र में सरकारी स्कूल लगभग निष्क्रिय हो गए थे। विकल्प की तलाश में यह प्रयोग अत्यंत सफल रहा। चूंकि उन दिनों पूरी दुनिया में 'कठिन, पहाड़, जनजातीय तथा दूरगामी क्षेत्रों' में शिक्षा को पहुंचाने के लिए अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी प्रयास हो रहे थे तो इस नवाचार की ओर सभी का ध्यान गया। भारत में भी अनेक राज्यों ने इसका अध्ययन किया और अपने यहां इसे लागू करना प्रारंभ किया।

इधर कई राज्यों ने शिक्षा कर्मी शब्द अपना लिया है, मगर उन्होंने मानदेय में कटौती कर दी है। जिसने भी सहज ढंग से इसका अध्ययन किया उसने पाया कि जब तक बेहतर व्यवस्था न हो सके तब तक इससे ही काम चलाया जाए। यह प्रयोग उन स्थानों के लिए नहीं था जहां प्रशिक्षित अध्यापक उपलब्ध थे। स्कूल उनकी नियुक्ति के बाद सुचारू रूप से चल रहे थे या चल सकते थे, मगर नौकरशाही ने इसे एक बड़ा अवसर समझा। उन्होंने थोड़े से मानदेय पर नियुक्ति से सरकारी खर्च को बचाने के एवज में इसका श्रेय लेना शुरू कर दिया। स्वतंत्र भारत में सरकारी अधिकारियों ने अध्यापकों को 'अपवाद छोड़कर' कभी अंतर्मन से सम्मान नहीं दिया। उन्होंने सदैव यही माना कि बच्चों को पढ़ाना कोई महत्वपूर्ण, कुशलता वाला या ज्ञान-आधारित कार्य नहीं है। इसे कोई भी कर सकता है। जिस देश में बेरोजगारी लगातार बढ़ती ही जा रही हो वहां सरकार को थोड़े से थोड़े मानदेय पर भी लोग तो मिल ही जाएंगे, फिर नियमित अध्यापक नियुक्त करने की क्या ही आवश्यकता है? जो नवाचार विशेष परिस्थितियों के लिए अल्पकालीन प्रावधान के रूप में संकल्पित और प्रमाणित किया गया था, उसे भारत के लगभग हर राज्य में लागू कर दिया गया। कुछ राज्यों ने तो नियमित अध्यापकों के सेवानिवृत्त होने पर भी केवल थोड़े से मानदेय पर शिक्षक नियुक्त करने शुरू कर दिए।

अवधेश राजपूत

अध्यापकों को गैर सरकारी कामों में लगाने में राज्य सरकारों ने सुप्रीम कोर्ट के निर्देशों तक की लगातार अनदेखी की। यह आज भी जारी है। स्कूलों की कार्यसंस्कृति पर इसका प्रभाव पड़ा है। अध्यापकों की अन्यमनस्कता भी अपने कार्य के प्रति बढ़ती गई। जहां नियमित नियुक्तियों के प्रयास हुए भी, वे परीक्षा के दौरान की अनियमितताओं के शिकार होते रहे। इससे उनका भविष्य अधर में लटके रहना एक परिपाटी सी बन गई।

आज स्थिति यह है कि सरकारी स्कूलों में अध्यापकों के लगभग दस लाख पद रिक्त हैं। यह संख्या इससे भी अधिक होगी, क्योंकि राज्य सरकारें पैरा-टीचर्स, जिनकी संख्या भी कई लाख है, भरे हुए पदों में शामिल कर लेती हैं। देश में एक लाख से अधिक ऐसे स्कूल हैं जो महज एक शिक्षक के भरोसे चल रहे हैं। केंद्र सरकार यहां एक अतिरिक्त शिक्षक की नियुक्ति के लिए तीन दशकों से राज्यों को अनुदान दे रही है। 2016 में संसद को सूचित किया गया कि झारखंड, बिहार और उत्तर प्रदेश में कक्षा आठ तक के स्कूलों में अध्यापकों के क्रमशः 38.39 प्रतिशत, 34.37 प्रतिशत और 22.99 प्रतिशत पद रिक्त हैं। इसका परिणाम अब सामने आ रहा है। पुराने और प्रतिष्ठित सरकारी स्कूल भी अब अपनी आभा और स्वीकार्यता खो चुके हैं। इसका मुख्य कारण यह है कि सरकारों ने शिक्षा की बढती मांग से चिंतित होकर अपने हाथ खींच लिए और निजी निवेश को सुविधाएं और प्रोत्साहन देना शुरू किया। समाज में जिन लोगों के पास संसाधन बढ़ते गए उन्होंने भी धीरे-धीरे अपने बच्चों को निजी स्कूलों में भेजना शुरू कर दिया। इस समय सरकारी स्कूलों में समाज के उन वर्गों के बच्चे ही जा रहे हैं जिन्हें शिक्षा की सबसे अधिक जरूरत है। उनकी प्रगति के लिए शिक्षा ही एकमात्र रास्ता है। यदि उनके लिए ही स्कूल की सुविधा छिन जाती है तो इससे निश्चित ही उनका विकास प्रभावित होगा। एक अनुमान के अनुसार देश में करीब छह करोड़ बच्चे स्कूलों में नामांकित नहीं हैं और बीस करोड़ कक्षा पांच से पहले ही स्कूल छोड़ देते हैं। यानी करीब 26 करोड़ अशिक्षित युवाओं को देश अंधकारमय भविष्य के लिए 'अकेला' छोड़ रहा है? स्कूलों के विलय से क्या इस संख्या के और बढ़ने की आशंका नहीं? और यदि है तो उसका समाधान क्या है? कोई भी इन सरकारी वायदों पर विश्वास नहीं करेगा कि स्कूल विलय के बाद बच्चों के आने-जाने की समस्या का समाधान वाहन भत्ता देकर किया जा सकता है!

उत्तराखंड के पहाड़ी इलाकों, कोरापुट, झाबुआ, बस्तर में कहां वाहन मिलेगा और कब और कितना भत्ता हासिल होगा? क्या किसी भी सरकार ने कहीं भी और कभी भी बच्चों को सरकारी स्कूलों में लाने के लिए निःशुल्क वाहन-व्यवस्था प्रबंधन सफलतापूर्वक किया है? क्या यह कर पाना संभव है? यदि नहीं, तो क्या एक छोटी उम्र के बच्चे से उसके स्कूल को दूर कर देना उचित होगा? लगभग दो दशक पहले डॉ. एपीजे अब्दुल कलाम ने एक संकल्पना देश के सामने रखी थी। इसे 'गांवों में शहर सरीखी सुविधाएं पहुंचाने' के लक्ष्य के तौर पर जाना गया। इसमें अच्छी सड़कों से लेकर बिजली और स्कूल आदि सुविधाएं गांवों की देहरी तक पहुंचाने की संकल्पना थी। यदि इसे देश के कुछ हिस्सों में भी लागू कर दिया गया होता तो शायद लोग आज स्कूल विलय पर भी भरोसा कर लेते।

(लेखक एनसीईआरटी के पूर्व निदेशक हैं)

response@jagran.com

सैन्य अभियान भर नहीं थी सर्जिकल स्ट्राइक

अनिल बलूनी

सर्जिकल स्ट्राइक राष्ट्रीय सम्मान और स्वाभिमान पर गलत निगाह रखने वालों के लिए एक कड़ी चेतावनी भी थी

28-29 सितंबर 2016 की रात वह समय था जब भारतीय सेना ने इतिहास रचा। आतंक के घर में घुसकर उसे नेस्तनाबूद कर ऐसा सबक सिखाया जिसे वे पीढ़ियों तक याद रखेंगे। 'सर्जिकल स्ट्राइक' सिर्फ एक सैन्य अभियान नहीं था। यह हमारे राष्ट्रीय सम्मान और स्वाभिमान पर गलत निगाह रखने वालों के लिए एक चेतावनी भी थी। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी अक्सर कहते हैं कि राष्ट्रनीति उनके लिए राजनीति से हमेशा ऊपर रही है। इसका एक प्रमाण 'सर्जिकल स्ट्राइक' भी थी। सर्जिकल स्ट्राइक के मूल में 18 सितंबर 2016 की वह भयावह घटना थी जिसमें उड़ी में भारतीय सेना के कैंप पर आतंकी हमला किया गया। इस हमले के बाद पाकिस्तान में बैठे आतंकियों के आकाओं ने यह सोच लिया होगा कि हर बार की तरह इस बार भी भारत कुछ देर बौखलाकर शांत बैठ जाएगा। शायद उन्हें इस बात का अहसास नहीं था कि हिंदुस्तान में सत्ता अब बदल चुकी है और अब भारत आतंकवाद को लेकर सिर्फ परामर्श नहीं करता, बल्कि प्रहार करना भी जानता है। उड़ी में आतंकी हमले के ठीक 11वें दिन भारतीय सैनिक पाकिस्तान में छिपे आतंकियों पर काल बनकर बरसे और उन्हें न तो संभलने का मौका दिया और न ही बचने का। यह पाकिस्तान के लिए एक बहुत बड़ा सबक था। सर्जिकल स्ट्राइक से वहां की सेना और सरकार को यह अहसास कराया गया कि जिन आतंकियों को पाल-पोस कर वह भारत में दहशत फैलाने का मंसूबा रखते हैं उन्हें हमारे सैनिक एक पल में जमींदोज कर सकते हैं। देश के लिए अपनी जान हथेली पर रखकर चलने वाले हमारे जांबाज उनकी हर बुरी हसरत पर पानी फेरने की कुव्वत रखते हैं।

सर्जिकल स्ट्राइक हर उस आतंकी हमले का जवाब थी जिसे भारत को कमजोर करने की कोशिश में अंजाम दिया गया। 2014 से पहले तक जिस तरह हमारी सरकार आतंकी हमलों पर नरम रवैया अपनाकर बैठी थी उससे आतंकवाद लगातार सिर उठाकर हमें आंखें दिखा रहा था।

उस वक्त भी हमारी सेना आतंकियों को मुंहतोड़ जवाब देने के लिए तैयार थी, लेकिन कांग्रेस नेतृत्व वाली संप्रग सरकार की कमजोर राजनीतिक इच्छाशक्ति के चलते यह संभव नहीं हो सका। 29 अक्टूबर 2005 को दीवाली से ठीक पहले दिल्ली में सीरियल ब्लास्ट हुए, लेकिन सरकार खामोश रही। 11 जुलाई 2006 को मुंबई लोकल ट्रेनों में सात अलग-अलग बम विस्फोट हुए, लेकिन हम फिर कुछ नहीं कर सके। समझौता एक्सप्रेस, हैदराबाद, जयपुर, असम में धमाके हुए, लेकिन तत्कालीन सरकार पाकिस्तान के खिलाफ सिर्फ बातें करती रही। वह न कोई ठोस कदम उठा और न ही आतंकियों को मुंहतोड़ जवाब देने के लिए कोई सटीक योजना धरातल पर उतार सकी। 26 नवंबर 2008 को मुंबई पर हुए आतंकी हमले के वक्त पूरी दुनिया हमारे साथ खड़ी दिखी, लेकिन उस वक्त भी हमारी सरकार पाकिस्तान को कोई कठोर जवाब देने का माद्दा नहीं दिखा सकी। विनम्रता को मनुष्य का आभूषण कहा जाता है, लेकिन दुर्जनों के सामने विनम्रता अति कायरता कहलाती है। इस बात को मोदी सरकार ने बखूबी समझा। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी अनेक बार यह कह चुके हैं कि हम न किसी से आंख झुकाकर बात करने में विश्वास रखते हैं और न ही आंख दिखाकर बात करने में। हम आंख से आंख मिलाकर बात करने में विश्वास करते हैं।

भारत ने कभी किसी मुल्क की ओर गलत नीयत से नहीं देखा। किसी भी देश की एक इंच जमीन पर हमने कभी कब्जा नहीं किया। हमने कभी हिंसा का समर्थन नहीं किया, लेकिन हमने अन्याय और आतंक के खिलाफ मौन रहना भी नहीं सीखा। सर्जिकल स्ट्राइक हमारी सेना की वीरगाथाओं में जुड़ चुका एक ऐसा पन्ना है जो देश की जनता को गर्व के अहसास से भरता रहेगा और साथ ही उन दहशतगर्दों में भारतीय सेना का खौफ जिंदा रखेगा जो पाकिस्तान में लगी आतंक की फैक्ट्रियों में तैयार हो रहे हैं। मैं देश के ऐसे हिस्से-उत्तराखंड से आता हूं जहां हर दूसरे घर से एक सैनिक निकलता है। उत्तराखंड ही नहीं, देश के हर हिस्से से आने वाला सैनिक जब सरहद पर होता है तो उसकी एक ही पहचान होती है-भारतीय सैनिक। एक ऐसा सैनिक जिसे अगर देश के नेतृत्व का साथ मिले तो वह आतंक की जड़ें काटने के लिए मुश्किल से मुश्किल अभियान को अंजाम दे सकता है-ठीक वैसे ही जैसे हमारी एक जांबाज सैनिक टुकड़ी ने सर्जिकल स्ट्राइक करके पाकिस्तान में बैठे आतंकियों की दुनिया तहस-नहस की। हमारे सैनिकों ने देशवासियों का यह भरोसा और मजबूत कर दिया कि उनके होते हुए कोई भी हमारी तरफ आंख उठाकर देखने की हिम्मत नहीं कर सकता।

(लेखक राज्यसभा सदस्य हैं)

response@jagran.com

ऊर्जा

मानसिक शांति

आज मानव सबसे ज्यादा अपने आप से परेशान है। किसी भी प्रकार से मानसिक शांति खरीदी नहीं जा सकती। मेरी नजर में इसका सबसे बड़ कारण पश्चिमी सभ्यता का अनुकरण है। ऋषि-मुनियों, तपस्वियों की भूमि पर पैदा हो कर हमारे पास मंदिर-देवस्थानों तथा प्रभु-स्मरण के लिए समय नहीं है। सिर्फ विपत्ति पड़ने पर ईश्वर को अनेक प्रकार (प्रसाद आदि) देकर अपना कार्य सिद्ध कराने की कोशिश करते रहते हैं। तत्काल लाभ न मिलने पर हम ईश्वर को दोष देकर नास्तिक बन जाते हैं। यदि हमें पूर्ण रूप से मानसिक शांति चाहिए तो अपने मन को वश में करके प्रभु स्मरण रूपी लक्ष्मण रेखा खींचनी होगी जिससे विकार रूपी रावण किसी भी प्रकार मन के अंदर प्रवेश न कर सके। मन की पवित्रता के बिना मानसिक शांति की कल्पना भी असंभव है। प्राचीन समय में लोग मेहनत तथा ईमानदारी से कमाए हुए धन को भौतिक सुख सुविधाओं में अधिक उपभोग न करके दीन-दुखियों की मदद, धर्म के कार्यों में सहयोग देकर आत्मिक प्रसन्नता का अनुभव करते थे।

आजकल गरीब मजदूर धनी लोगों की अपेक्षा अधिक सुखी हैं, क्योंकि वे कड़ी मेहनत करके भी मानसिक तनाव से मुक्त रहकर आत्म संतोष का अनुभव करते हैं। पश्चिमी सभ्यताओं के अनुकरण में हम आज इतने अंधे हो चुके हैं कि दूध-दही की नदियों के देश में शराब के ठेकों की भरमार है। अपने कर्मों के फलस्वरूप मानसिक अशांति होने पर अनेक लोग टोना-टोटका आदि के चक्करों में पड़कर धन और समय दोनों की बर्बादी करते रहते हैं। आज हर व्यक्ति का जीवन तनाव से भरा है मानसिक शांति पाने के लिए हंसना भी बहुत आवश्यक है। हंसने से इंसान कुछ देर के लिए सब कुछ भूल जाता है। इस संबंध में मदर टेरेसा ने कहा है कि शांति की शुरुआत मुस्कुराहट से होती है। हंसी से अनावश्यक भय, अनिद्रा आदि समस्याएं दूर रहती हैं। व्यक्ति की कार्य शक्ति बढ़ जाती है। विश्वास जगता है। हंसने से तनाव बढ़ाने वाले हार्मोन का स्राव कम होने लगता है। हंसी ऐसे प्राकृतिक किलर सेल पैदा करने लगती हैं जिनसे घातक बीमारियों से भी लड़ा जा सकता है। हंसी से रक्तचाप नियंत्रित रहता है और स्वास्थ्य प्रक्रिया में प्रभाव और सुधार आता है। निराशा के क्षणों में हंसी जीवनदायिनी का काम करती है और ऊर्जा भर देती है।

डॉ. पूर्णिमा अग्रवाल

तथ्य-कथ्य | किस खाद्य सामग्री में पानी की कितनी खपत

एक किलो उत्पादन के लिए पानी की प्रति लीटर जरूरत

स्रोत : वाटर फुटप्रिंट नेटवर्क

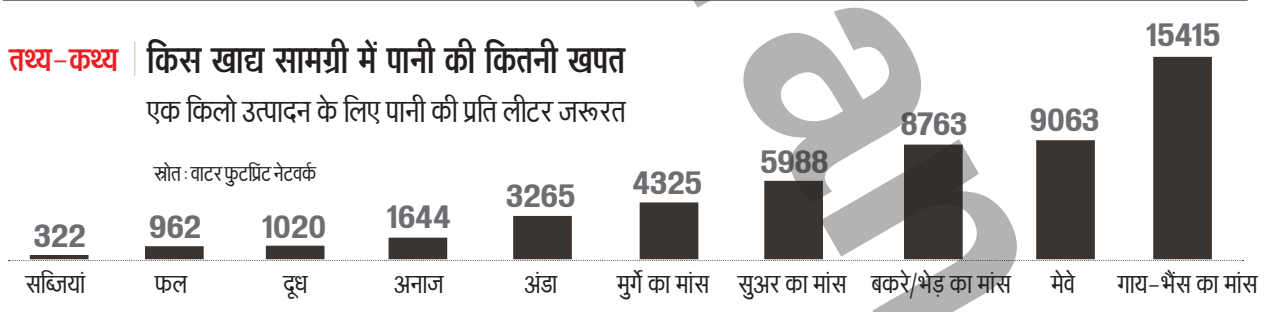

पाठकनामा

pathaknama@nda .jagran.com

डाटा सुरक्षा का सवाल

आधार को सुरक्षित कवच की दरकार शीर्षक से लिखे अपने लेख में पवन दुग्गल ने आधार की सुरक्षा पर अपनी राय दी है, लेकिन उनको यह भी बतानी चाहिए थी कि आधार की सुरक्षा की जिम्मेदारी साइबर सेल की है, न कि सरकार की। अगर सरकार को ही इसका सुरक्षा कवच बनाना है तो साइबर सेल और पुलिस का क्या काम? सुप्रीम कोर्ट ने आधार को लेकर जो फैसला दिया है, वह आमजन के लिए कितना फायदेमंद होगा यह तो आने वाला समय ही बताएगा, लेकिन कोर्ट को बैंक खाते और मोबाइल सिम कार्ड के लिए आधार की अनिवार्यता जरूर बनाए रखनी चाहिए थी, क्योंकि इससे विभिन्न प्रकार की जालसाजी या धोखाधड़ी पर आसानी से नकेल कसी जा सकती है। दरअसल किसी भी तरह के ढांचे को मजबूत करने के लिए उसकी नींव या आधार को मजबूत करना बहुत जरूरी होता है। सरकार डिजिटल लेन-देने को बढ़ावा देने का प्रयास कर रही है, लेकिन इसी बीच साइबर चोर भी काफी सक्रिय हो गए हैं। माना कि सरकार सरकारी योजनाओं का दुरुपयोग रोकने के लिए आधार को अनिवार्य बनाना चाहती है, लेकिन सरकार को इस पर पुनर्विचार करना चाहिए कि क्या देश में साइबर चोरों पर नकेल कसने के लिए पर्याप्त इंतजाम है। राजेश कुमार चौहान, जालंधर

अफगानिस्तान के लिए जीत

यूएई में चल रहे एशिया कप में भारत, श्रीलंका, पाकिस्तान, बांग्लादेश, हांगकांग और अफगानिस्तान की टीमें खेल रही हैं, लेकिन, इस खेल के मेले में अफगानिस्तान का प्रदर्शन विशेष चर्चा का विषय बना रहा। बेशक क्रिकेट में अफगानिस्तान नवोदित है, लेकिन टीम ने इस विशेष मौके पर बड़े-बड़े टीम जैसे भारत श्रीलंका पाकिस्तान जैसी टीमों को अपने प्रदर्शन से चौंका दिया। विगत मंगलवार को उनका अंतिम मुकाबला भारत से था और ऐसे आसार लगाए जा रहे थे कि इस मैच में भारत आसानी से जीत जाएगा, लेकिन यह मैच टाई पर खत्म हुआ। पूरे टूर्नामेंट में अफगानी खिलाड़ियों ने प्रतिद्वंद्वी खिलाड़ियों को अपना लोहा मनवाया। उन्होंने श्रीलंका व बांग्लादेश को बड़ी आसानी से हरा दिया। उसके बाद सुपर-4 के मुकाबले में पाकिस्तान और बांग्लादेश से हार गए, लेकिन इनकी तारीफ इसलिए की जानी चाहिए, क्योंकि हाल ही में उन्हें टेस्ट टीम का दर्जा मिला है। अफगानिस्तान के खिलाड़ियों का प्रदर्शन वाकई में बेहतरीन था।

shivendratiwari069@gmail.com

दो वर्ष पूरे

29 सितंबर 2018 को सर्जिकल स्ट्राइक को 2 वर्ष पूरे हो रहे हैं और तब से अब तक इन वर्षों में सैकड़ों आतंकियों को मौत के घाट उतारा जा चुका है। यह वही आतंकी है जो पाकिस्तान के इशारे पर कश्मीर के अंदर दहशत का तांडव कर रहे हैं, लेकिन भारतीय सेना भी आतंकियों से जबरदस्त टक्कर ले रही है और अपने आल आउट मिशन को कामयाब बनाने में लगी हुई है। पाकिस्तान की हालत ऐसी है कि उसके खाने के लाले पड़ रहे हैं, फिर भी वह आतंक का रास्ता नहीं छोड़ रहा है। उसने देश के अंदर कितने जगहों पर आतंकी हमला करवाएं और उस हमले में कितने निर्दोषों की जान ली, लेकिन भारत हमेशा दोस्ती का हाथ बढ़ाता रहा, अति तो तब हो गयी थी जब 18 सितंबर 2016 को सुबह 5.30 बजे आतंकियों ने एलओसी के निकट उरी सेक्टर में भारतीय सेना के मुख्यालय पर हमला कर दिया था। हमले की भीषणता का अंदाजा इसी बात से लगाया जा सकता है कि सिर्फ 3 मिनट के 17 ग्रेनेड फेंके गए थे, इतना ही नहीं कितने बेस कैंप में आग लगा दी, सेना और आतंकियों के बीच लगभग 6 घंटे फायरिंग चलती रही, तब जाकर इन आतंकियों को खत्म किया जा सका।

pathaknirajkumarw013@gmail.com

दुर्भाग्य पूर्ण फैसला

भारत की सर्वोच्च न्यायालय ने व्याभिचार पर जो फैसला दिया है संभवतया ऐसे कई लोग होंगे जो इस फैसले से सहमत नहीं होंगे, जिनमें से मैं भी एक हूं। वास्तव में शादीशुदा होते हुए भी दूसरे की स्त्री के साथ संबंध रखने में आज से पहले निषेधाज्ञा थी, जो अब जायज घोषित कर दिया गया है, दुर्भाग्य है कि 158 साल पहले पुख्ता कानून को सिर्फ दैहिक सुख, विलासिता के कारण पलट दिया गया है आइपीसी की धारा 497 को खत्म कर दिया गया। जैसा कि सुप्रीम कोर्ट कहता है कि यह कानून शादीशुदा महिला की गरिमा, सेक्सुअल आजादी और उसकी पसंद के अधिकार का उल्लंघन करता है व आस्ट्रेलिया, जापान व चीन जैसे देशों में भी एडलटरी अपराध नहीं है। क्या यह कहना व इन देशों से भारत जैसे संस्कारों को मानने वाले देश से तुलना करना बेहूदा नहीं होगा? हमारा देश दैहिक सुख से भौतिक सुख से कहीं अधिक आध्यात्मिक सुख को ऊपर मानता है। अतः धारा 497 को समाप्त कर महिला पुरुष को संस्कारों की एक पवित्र परिधि से बाहर का खुला रास्ता इजाद कर दिया है जिसका दुष्परिणाम भावी व वर्तमान पीढ़ी के उन नौजवानों पर पड़ेगा। vijaypapnaiz@gmail.com

भाषा पर नियंत्रण जरूरी

हमारे देश के नेताओं की भाषा पर किसी भी प्रकार का कोई लगाम नहीं है। विश्व के सबसे बड़े लोकतंत्र के प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के लिए चोर शब्द का इस्तेमाल बहुत अशोभनीय है। कोई भी दल चाहे वह विपक्ष में हो या सत्तारूढ़ हो, प्रधानमंत्री की पद की अपनी गरिमा होती है। इस पद को किसी भी कीमत पर ठेस नहीं पहुंचाना चाहिए। कांग्रेस के अध्यक्ष राहुल गांधी द्वारा देश के प्रधानमंत्री के लिए चोर शब्द का इस्तेमाल किया जाना बहुत ही अशोभनीय हरकत है। vijaykumardhania@gmail.com

ट्वीट-ट्वीट

सबरीमाला में प्रवेश की अनुमति के साथ महिलाओं को हक मिल गया। अब पुष्कर के ब्रह्मा मंदिर में सभी पुरुषों को जाने और मुजफ्फरपुर के देवी मंदिर और कामाख्या में पुरुषों को प्रतिदिन प्रवेश की इजाजत मिले। सांकेतिक समानता चाहिए तो अंतहीन मुद्दे हैं। श्वेता सिंह@SwetaSinghAT

'मेड इन एमपी' मोबाइल, 'मेड इन चित्रकूट' मोबाइल, भेल के मोबाइल, पता नहीं राहुलजी और कहां-कहां मोबाइल बनाने की फैक्ट्री लगाने वाले हैं! राहुलजी आज भले कुछ भी बोल रहे हैं, पर सच्चाई यही है कि पिछले 70 सालों में 'मेड इन अमेठी' लिखा हुआ 'पतली पिन का चार्जर' भी नहीं बना पाए! शिवराज सिंह चौहान@ChouhanShivraj

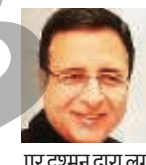

पीएम मोदी और भाजपा हमारे जवानों के 'शौर्य और बलिदान' की कसौटी पर भी राजनीतिक रोटियां सेंकते आए हैं। जबकि सरकार के ढुलमुल रवैये व बेमेल दिशा के चलते भारत की सीमाओं पर दुश्मन द्वारा लगातार गोलाबारी जारी है। आंतरिक सुरक्षा भी खतरे में है। रणदीप सिंह सुरजेवाला@rssurjewala

सुप्रीम कोर्ट का कहना है कि भीमा कोरेगांव मामले में गिरफ्तारियां वैचारिक मतभेद का नतीजा नहीं थीं। यही मौका है उन लोगों को पहचानने का जो निजी हितों के लिए हर बात को देश और लोकतंत्र पर खतरा बताकर छाती पीटते रहते हैं। सुशांत सिन्हा@SushantBSinha

जनपथ

अब तो खुद मीलॉर्ड ने तोड़ दिए अनुबंध,
पति-पत्नी निश्चिंत हो घूमें अब स्वच्छंद।
घूमें अब स्वच्छंद चहे जो कहे जमाना,
खुद ही सुप्रिम कोर्ट गा रहा नया तराना।
ठेंगे प